औलाद
की इस्लाह व तरबियत
ख़िताब
जस्टिस मौलाना मुफ़्ती
मुहम्मद तक़ी साहिब उस्मानी

औलाद
की इस्लाह व तरबियत

ख़िताब

जस्टिस मौलाना मुफ़्ती
मुहम्मद तक़ी साहिब उस्मानी

अनुवादक

मु० इमरान क़ासमी एम०ए० (अलीग)

प्रकाशक

फ़रीद बुक डिपो प्रा० लि०
422, मटिया महल, ऊर्दू मार्किट, जामा मस्जिद देहली 6
फ़ोन आफ़िस 3289786,3289159 आवास 3262486

☆☆☆☆☆☆☆☆☆☆☆☆☆☆☆

नाम किताब — औलाद की इस्लाह व तरबियत

ख़िताब — मौलाना मु० तक़ी उस्मानी

अनुवादक — मु० इमरान क़ासमी

संयोजक — मु० नासिर ख़ान

तायदाद — 1100

प्रकाशन वर्ष — जुलाई 2001

कम्पोज़िंग — इमरान कम्प्यूटर्स
मुज़फ़्फ़र नगर (0131-442408)

\>>>>>>>>>>>

प्रकाशक

फ़रीद बुक डिपो प्रा० लि०

422, मटिया महल, ऊर्दू मार्किट, जामा मस्जिद देहली 6

फ़ोन आफ़िस 3289786,3289159 आवास 3262486

फ़ेहरिस्ते मज़ामीन

بسم اللہ الرحمن الرحیم

औलाद की इस्लाह व तरबियत

اَلْحَمْدُ لِلّٰهِ نَحْمَدُهٗ وَنَسْتَعِيْنُهٗ وَنَسْتَغْفِرُهٗ وَنُؤْمِنُ بِهٖ وَنَتَوَكَّلُ عَلَيْهِ وَنَعُوْذُ بِاللّٰهِ مِنْ شُرُوْرِ اَنْفُسِنَا وَمِنْ سَيِّئَاتِ اَعْمَالِنَا مَنْ يَّهْدِهِ اللّٰهُ فَلَا مُضِلَّ لَهٗ وَمَنْ يُّضْلِلْهُ فَلَا هَادِيَ لَهٗ وَنَشْهَدُ اَنْ لَّا اِلٰهَ اِلَّا اللّٰهُ وَحْدَهٗ لَا شَرِيْكَ لَهٗ وَنَشْهَدُ اَنَّ سَيِّدَنَاوَسَنَدَنَاوَمَوْلَانَا مُحَمَّدًا عَبْدُهٗ وَرَسُوْلُهٗ صَلَّى اللّٰهُ تَعَالٰى عَلَيْهِ وَعَلٰى اٰلِهٖ وَ اَصْحَابِهٖ وَبَارَكَ وَسَلَّمَ تَسْلِيْماً كَثِيْرًا كَثِيْرًا۔ اَمَّا بَعْدُ:

فَاَعُوْذُ بِاللّٰهِ مِنَ الشَّيْطٰنِ الرَّجِيْمِ، بِسْمِ اللّٰهِ الرَّحْمٰنِ الرَّحِيْمِ۔

يَااَيُّهَا الَّذِيْنَ اٰمَنُوْا قُوْا اَنْفُسَكُمْ وَاَهْلِيْكُمْ نَارًا وَّقُوْدُهَا النَّاسُ وَالْحِجَارَةُ عَلَيْهَا مَلَائِكَةٌ غِلَاظٌ شِدَادٌ لَّا يَعْصُوْنَ اللّٰهَ مَا اَمَرَهُمْ وَيَفْعَلُوْنَ مَا يُؤْمَرُوْنَ۔

(سورۃ التحریم:٦)

آمنت باللّٰه صدق اللّٰه مولاناالعظیم، وصدق رسوله النبی الکریم ونحن علی ذلك من الشاهدین والشاکرین، والحمد للّٰه رب العالمین.

अ़ल्लामा नववी रह्मतुल्लाहि अ़लैहि ने आगे इस किताब ''रियाज़ुस्सालिहीन'' में एक नया बाब क़ायम फ़रमाया है, जिसके ज़रिये यह बयान करना मक़्सूद है कि इन्सान के ज़िम्मे सिर्फ़ ख़ुद अपनी इस्लाह ही वाजिब नहीं है, बल्कि अपने घर वालों, अपने बीवी बच्चों और अपने मातहत जितने भी अफ़राद हैं, उनकी इस्लाह करना, उनको दीन की तरफ़ लाने की

कोशिश करना, उनको फ़राइज़ व वाजिबात की अदायगी की ताकीद करना, और गुनाहों से बचने की ताकीद करना भी इन्सान के ज़िम्मे फ़र्ज़ है, इस मक़सद के तहत यह बाब क़ायम फ़रमाया है, और इसमें कुछ आयाते क़ुरआनी और कुछ अहादीसे नबवी नक़ल की हैं।

ख़िताब का प्यारा उन्वान

यह आयत जो अभी मैंने आपके सामने तिलावत की, यह हक़ीक़त में इस बाब का बुनियादी उन्वान है, इस आयत में अल्लाह तआला ने तमाम मुसलमानों को ख़िताब करते हुए फ़रमायाः

"يَآاَيُّهَا الَّذِيْنَ اٰمَنُوْا"

यानी ऐ ईमान वालो! आपने देखा होगा कि क़ुरआने करीम में अल्लाह तआला ने मुसलमानों से ख़िताब करने के लिये जगह जगह "या अय्युहल्-लज़ी-न आमनू" के अल्फ़ाज़ इस्तेमाल फ़रमाये हैं। हमारे हज़रत डाक्टर अ़ब्दुल हई साहिब रह्मतुल्लाहि अ़लैहि फ़रमाया करते थे कि यह "या अय्युहल्-लज़ी-न आमनू" का उन्वान जो अल्लाह तआ़ला मुसलमानों से ख़िताब करते हुए इस्तेमाल फ़रमाते हैं, यह बड़ा प्यारा उन्वान है, यानी ऐ ईमान वालो, ऐ वे लोगो जो ईमान लाये। इस ख़िताब में बड़ा प्यार है, इसलिये कि ख़िताब का एक तरीक़ा यह है कि मुख़ातब का नाम लेकर ख़िताब किया जाये, ऐ फ़लां! और ख़िताब का दूसरा तरीक़ा यह होता है कि मुख़ातब को उस रिश्ते का हवाला देकर ख़िताब किया जाये जो ख़िताब करने वाले का उससे क़ायम है, जैसे एक बाप

अपने बेटे को बुलाये तो इसका एक तरीक़ा तो यह है कि उस बेटे का नाम लेकर उसको पुकारे कि ऐ फ़लां! और दूसरा तरीक़ा यह है कि उसको "बेटा" कह कर पुकारे कि ऐ बेटे! ज़ाहिर है कि बेटा कह कर पुकारने में जो प्यार, जो शफ़क़त और जो मुहब्बत है, और सुनने के लिये इसमें जो लुत्फ़ है, वह प्यार और लुत्फ़ नाम लेकर पुकारने में नहीं है।

लफ़्ज़ "बेटा" एक शफ़क़त भरा ख़िताब

शैख़ुल इस्लाम हज़रत मौलाना शब्बीर अहमद साहिब उस्मानी रहमतुल्लाहि अ़लैहि इतने बड़े आ़लिम और फ़क़ीह थे, हमने तो उनको उस वक़्त देखा था जब पाकिस्तान में तो क्या, सारी दुनिया में इल्म व फ़ज़्ल के एतिबार से उनका कोई सानी नहीं था। सारी दुनिया में उनके इल्म व फ़ज़्ल का लोहा माना जाता था, कोई उनको "शैख़ुल इस्लाम" कह कर मुख़ातब करता, कोई उनको "अ़ल्लामा" कह कर मुख़ातब करता, बड़े ताज़ीमी अल्क़ाब उनके लिये इस्तेमाल किये जाते थे, कभी कभी वह हमारे घर तश्रीफ़ लाते थे, उस वक़्त हमारी दादी ज़िन्दा थीं, हमारी दादी साहिबा रिश्ते में हज़रत अ़ल्लामा की मुमानी लगती थीं, इसलिये वह उनको "बेटा" कह कर पुकारती थीं, और उनको दुआ़ देती थीं कि "बेटा! जीते रहो" जब हम उनके मुंह से ये अल्फ़ाज़ इतने बड़े अ़ल्लामा के लिये सुनते, जिन्हें दुनिया "शैख़ुल इस्लाम" के लक़ब से पुकार रही थी तो उस वक़्त हमें बड़ा अचंभा महसूस होता था, लेकिन अ़ल्लामा उस्मानी रहमतुल्लाहि अ़लैहि फ़रमाया करते थे कि मैं हज़रत मुफ़्ती साहिब (मुफ़्ती मुहम्मद शफ़ी साहिब रहमतुल्लाहि

अ़लैहि) के घर में दो मक़्सद से आता हूं।

एक यह कि हज़रत मुफ़्ती साहिब से मुलाक़ात, दूसरे यह कि इस वक़्त रूए ज़मीन पर मुझे "बेटा" कहने वाला सिवाये इन ख़ातून के कोई और नहीं है, सिर्फ़ यह ख़ातून मुझे बेटा कह कर पुकारती हैं, इसलिये मैं बेटा का लफ़्ज़ सुनने के लिये आता हूं, उसके सुनने में जो लुत्फ़ और प्यार महसूस होता है वह मुझे कोई और लक़ब सुनने में महसूस नहीं होता।

हक़ीक़त यह है कि इसकी क़द्र उस शख़्स को होती है जो इसके कहने वाले के जज़्बे से वाक़िफ़ हो, वह इसको जानता है कि मुझे यह जो "बेटा" कह कर पुकारा जा रहा है, यह कितनी बड़ी नेमत है, एक वक़्त आता है जब इन्सान यह लफ़्ज़ सुनने को तरस जाता है।

चुनांचे हज़रत डाक्टर अ़ब्दुल हई साहिब रह्मतुल्लाहि अ़लैहि फ़रमाते थे कि अल्लाह तआ़ला "या अय्युहल्–लज़ी–न आमनू" का ख़िताब करके उस रिश्ते का हवाला देते हैं जो हर ईमान वाले को अल्लाह तआ़ला के साथ है, यह ऐसा ही है जैसे कोई बाप अपने बेटे को "बेटा" कह कर पुकारे, और इस लफ़्ज़ को इस्तेमाल करने का मक़्सद यह होता है कि आगे जो बात बाप कह रहा है वह शफ़्क़त, मुहब्बत और ख़ैर–ख़्वाही से भरी हुई है। इसी तरह अल्लाह तआ़ला भी क़ुरआने करीम में जगह जगह इन अल्फ़ाज़ से मुसलमानों को ख़िताब फ़रमा रहे हैं। उन्ही जगहों में से एक जगह यह है। चुनांचे फ़रमायाः

आयत का तर्जुमा

يَآاَيُّهَا الَّذِيْنَ اٰمَنُوْا قُوْٓا اَنْفُسَكُمْ وَاَهْلِيْكُمْ نَارًا وَّقُوْدُهَا النَّاسُ

وَالْحِجَارَةُ عَلَيْهَامَلَائِكَةٌ غِلَاظٌ شِدَادٌ لَّايَعْصُونَ اللّٰهَ مَآ اَمَرَهُمْ وَيَفْعَلُوْنَ مَا يُؤْمَرُوْنَ٥

ऐ ईमान वालो! अपने आपको और अपने घर वालों को भी आग से बचाओ, वह आग कैसी है? आगे उसकी सिफ़त बयान फ़रमाई कि उस आग का ईंधन लकड़ियां और कोयले नहीं है, बल्कि उस आग का ईंधन इन्सान और पत्थर होंगे, और उस आग के ऊपर अल्लाह तआ़ला की तरफ़ से ऐसे फ़रिश्ते मुक़र्रर हैं जो बड़े ग़लीज़ और कड़वे मिज़ाज वाले हैं, सख़्त मिज़ाज हैं और अल्लह तआ़ला उनको जिस बात का हुक्म देते हैं, वे उस हुक्म की कभी ना–फ़रमानी नहीं करते, और वही काम करते हैं जिसका उन्हें हुक्म दिया जाता है।

ज़ाती अ़मल नजात के लिये काफ़ी नहीं

इस आयत से अल्लाह तआ़ला ने यह फ़रमा दिया कि बात सिर्फ़ यहां तक ख़त्म नहीं होती कि बस अपने आपको आग से बचा कर बैठ जाओ, और इससे मुत्मइन हो जाओ कि बस मेरा काम हो गया, बल्कि अपने घर वालों और बाल बच्चों को भी आग से बचाना ज़रूरी है। आज यह मन्ज़र कस्रत से नज़र आता है कि आदमी अपनी ज़ात में बड़ा दीनदार है, नमाज़ों का पाबन्द है, पहली सफ़ में हाज़िर हो रहा है, रोज़े रख रहा है, ज़कात अदा कर रहा है, अल्लाह के रास्ते में माल ख़र्च कर रहा है, और जितने अवामिर (अह्काम)व नवाही (मना की गई चीज़ें) हैं, उन पर अ़मल करने की कोशिश कर रहा है, लेकिन उसके घर को देखो, उसकी औलाद को देखो, बीवी बच्चों को देखो तो उनमें और उसमें ज़मीन व आसमान का फ़र्क़ है, यह

कहीं जा रहा है, वे कहीं जा रहे हैं, इसका रुख़ मश्रिक़ की तरफ़ है, उनका रुख़ मग़रिब की तरफ़ है, उनमें न नमाज़ की फ़िक्र है, न फ़राइज़े दीनिया को बजा लाने का एहसास है, और न गुनाहों को गुनाह समझने की फ़िक्र है, बस गुनाहों के सैलाब में बीवी बच्चे बह रहे हैं, और यह साहिब इस पर मुत्मइन हैं कि मैं पहली सफ़ में हाज़िर होता हूं, और जमाअ़त के साथ नमाज़ अदा करता हूं। ख़ूब समझ लें, जब तक अपने घर वालों को आग से बचाने की फ़िक्र न हो, ख़ुद इन्सान की अपनी नजात नहीं हो सकती, इन्सान यह कह कर जान नहीं बचा सकता कि मैं तो ख़ुद अपने अ़मल का मालिक था, अगर औलाद दूसरी तरफ़ जा रही थी तो मैं क्या करता, इसलिये कि उनको बचाना भी तुम्हारे फ़राइज़ में शामिल था, जब तुमने इसमें कोताही की तो अब आख़िरत में तुमसे सवाल होगा।

अगर औलाद न माने तो!

इस आयत में अल्लाह तआ़ला ने फ़रमाया कि अपने आपको और अपने घर वालों को आग से बचाओ, हक़ीक़त में इसमें एक शुबह के जवाब की तरफ़ इशारा फ़रमाया जो शुबह आम तौर पर हमारे दिलों में पैदा होता है, वह शुबह यह है कि आज जब लोगों से यह कहा जाता है कि अपनी औलाद को भी दीन की तालीम दो, कुछ दीन की बातें उनको सिखाओ, उनको दीन की तरफ़ लाओ, गुनाहों से बचाने की फ़िक्र करो, तो इसके जवाब में आम तौर पर कसरत से लोग यह कहते हैं कि हमने औलाद को दीन की तरफ़ लाने की बड़ी कोशिश की, मगर क्या करें कि माहौल और मुआ़शरा इतना ख़राब है कि

बीवी बच्चों को बहुत समझाया, मगर वे मानते नहीं हैं और ज़माने की खराबी से मुतास्सिर होकर उन्हों ने दूसरा रास्ता इख़्तियार कर लिया है, और उस रास्ते पर जा रहे हैं, और रास्ता बदलने के लिये तैयार नहीं हैं। अब उनका अमल उनके साथ है हमारा अमल हमारे साथ है, अब हम क्या करें। और दलील यह पेश करते हैं कि हज़रत नूह अलैहिस्सलाम का बेटा भी तो आख़िर काफ़िर रहा, और हज़रत नूह अलैहिस्सलाम उसको तूफ़ान से न बचा सके, इसी तरह हमने बहुत कोशिश कर ली है, वे नहीं मानते तो हम क्या करें?

दुनियावी आग से किस तरह बचाते हो?

चुनांचे कुरआने करीम ने इस आयत में "आग" का लफ़्ज़ इस्तेमाल करके इस इश्काल और शुबहे का जवाब दिया है। वह यह है कि यह बात वैसे उसूली तौर पर तो ठीक है कि अगर मां बाप ने औलाद को बेदीनी से बचाने की अपनी तरफ़ से पूरी कोशिश कर ली है तो इन्शा अल्लाह मां बाप फिर ज़िम्मेदारी से बरी हो जायेंगे, और औलाद के किये का वबाल औलाद पर पड़ेगा। लेकिन देखना यह है कि मां बाप ने औलाद को बेदीनी से बचाने की कोशिश किस हद तक की है? और किस दर्जे तक की है? कुरआने करीम ने "आग" का लफ़्ज़ इस्तेमाल करके इस बात की तरफ़ इशारा कर दिया कि मां बाप को अपनी औलाद को गुनाहों से इस तरह बचाना चाहिये जिस तरह उनको आग से बचाते हैं।

फ़र्ज़ करें कि एक बहुत बड़ी ख़तरनाक आग सुलग रही है, जिस आग के बारे में यकीन है कि अगर कोई शख़्स उस

आग के अन्दर दाख़िल किया गया तो ज़िन्दा नहीं बचेगा, अब आपका नादान बच्चा उस आग को ख़ुशमन्ज़र और ख़ूबसूरत समझ कर उसकी तरफ़ बढ़ रहा है, अब बताओ तुम उस वक़्त क्या करोगे? क्या तुम इस पर बस करोगे कि दूर से बैठ कर बच्चे को नसीहत करना शुरू कर दो कि बेटा! उस आग में मत जाना, यह बड़ी ख़तरनाक चीज़ होती है अगर जाओगे तो तुम जल जाओगे, और मर जाओगे? क्या कोई मां बाप सिर्फ़ ज़बानी नसीहत पर बस करेगा? और इस नसीहत के बावजूद अगर बच्चा उस आग में चला जाये तो क्या वे मां बाप यह कह कर अपनी ज़िम्मेदारी से बरी हो जायेंगे कि हमने तो इसको समझा दिया था। अपना फ़र्ज़ अदा कर दिया था। इसने नहीं माना और ख़ुद ही अपनी मर्ज़ी से आग में कूद गया तो मैं क्या करूं? दुनिया में कोई मां बाप ऐसा नहीं करेंगे, अगर वे उस बच्चे के हक़ीक़ी मां बाप हैं तो उस बच्चे को आग की तरफ़ बढ़ता हुआ देख कर उनकी नींद हराम हो जायेगी, उनकी ज़िन्दगी हराम हो जायेगी, और जब तक उस बच्चे को गोद में उठा कर उस आग से दूर नहीं ले जायेंगे, उस वक़्त तक उनको चैन नहीं आयेगा।

अल्लाह तआ़ला यह फ़रमा रहे हैं कि जब तुम अपने बच्चे को दुनिया की मामूली सी आग से बचाने के लिये सिर्फ़ ज़बानी जमा ख़र्च पर बस नहीं करते तो जहन्नम की वह आग जिसकी हद्द व निहायत नहीं, और जिसका तसव्वुर नहीं किया जा सकता, उस आग से बच्चे को बचाने के लिये ज़बानी जमा ख़र्च को काफ़ी क्यों समझते हो? इसलिये यह समझना कि हमने उन्हें समझा कर अपना फ़रीज़ा अदा कर लिया, यह बात

आसानी से कहने की नहीं है।

आज दीन के अलावा हर चीज़ की फ़िक्र है

हज़रत नूह अलैहिस्सलाम के बेटे की जो मिसाल दी जाती है कि उनका बेटा काफ़िर रहा, वह उसको आग से नहीं बचा सके, यह बात दुरुस्त नहीं, इसलिये कि यह भी तो देखो कि उन्हों ने उसको सही रास्ते पर लाने की नौ सौ साल तक लगातार कोशिश की, उसके बावजूद जब वह रास्त पर नहीं आया तो अब उनके ऊपर कोई मुतालबा और मुवाख़ज़ा (पकड़) नहीं। लेकिन हमारा हाल यह है कि एक दो मर्तबा कहा और फिर फ़ारिग़ होकर बैठ गये कि हमने तो कह दिया, हालांकि होना यह चाहिये कि उनको गुनाहों से उसी तरह बचाओ जिस तरह उनको हकीकी आग से बचाते हो, अगर इस तरह नहीं बचा रहे हो तो इसका मतलब यह है कि फ़रीज़ा अदा नहीं हो रहा है। आज तो यह नज़र आ रहा है कि औलाद के बारे में हर चीज़ की फ़िक्र है, जैसे यह तो फ़िक्र है कि बच्चे की तालीम अच्छी हो, उसका कैरियर अच्छा बने, यह फ़िक्र है कि मुआशरे में उसका मक़ाम अच्छा हो, यह फ़िक्र तो है कि उसके खाने पीने और पहनने का इन्तिज़ाम अच्छा हो जाये, लेकिन दीन की फ़िक्र नहीं।

थोड़ा सा बेदीन हो गया है

हमारे एक जानने वाले थे जो अच्छे ख़ासे पढ़े लिखे थे, दीनदार और तहज्जुद गुज़ार थे, उनके लड़के ने नई अंग्रेज़ी तालीम हासिल की, जिसके नतीजे में उसको कहीं अच्छी नौकरी मिल गयी, एक दिन वह बड़ी ख़ुशी के साथ बताने लगे

कि माशा–अल्लाह हमारे बेटे ने इतना पढ़ लिया, अब उनको नौकरी मिल गयी और मुआशरे में उसको बड़ा मक़ाम हासिल हो गया, हां थोड़ा सा बेदीन तो हो गया, लेकिन मुआशरे में उसका कैरियर बड़ा शानदार बन गया है।

अब अन्दाज़ा लगाइये कि उन साहिब ने इस बात को इस तरह बयान किया कि "वह बच्चा ज़रा सा बेदीन हो गया तो हो गया, मगर उसका कैरियर बड़ा शानदार बन गया" मालूम हुआ कि बेदीन होना कोई बड़ी बात नहीं है, बस ज़रा सी गड़–बड़ी हो गयी है, हालांकि वह साहिब ख़ुद बड़े दीनदार और तहज्जुद गुज़ार आदमी थे।

"जान" तो निकल गयी है

हमारे वालिद माजिद हज़रत मुफ़्ती मुहम्मद शफ़ी साहिब रहमतुल्लाहि अलैहि एक वाकिआ सुनाया करते थे कि एक शख़्स का इन्तिकाल हो गया, लेकिन लोग उसको ज़िन्दा समझ रहे थे, चुनांचे लोगों ने डाक्टर को बुलाया, ताकि मुआयना करे कि इसको क्या बीमारी है? यह कोई हर्कत क्यों नहीं कर रहा है, चुनांचे डाक्टर साहिब ने मुआयना करने के बाद बताया कि यह बिल्कुल ठीक ठाक आदमी है, सर से लेकर पांव तक तमाम आज़ा (अंग) ठीक हैं, बस ज़रा सी जान निकल गयी है।

बिल्कुल इसी तरह उन साहिब ने अपने बेटे के बारे में कहा कि "माशा–अल्लाह उसका कैरियर तो बड़ा शानदार बन गया है, बस ज़रा सा बेदीन हो गया है" गोया कि " बेदीन" होना कोई ऐसी बात नहीं जिससे बड़ा नुक़्स पैदा होता हो।

नई नस्ल की हालत

आज हमारा यह हाल है कि और हर चीज़ की फ़िक्र है मगर दीन की तरफ़ तवज्जोह नहीं, भाई! अगर यह दीन इतनी ही ना–क़ाबिले तवज्जोह चीज़ थी तो फिर आपने नमाज़ पढ़ने की और तहज्जुद गुज़ारी की और मस्जिदों में जाने की तक्लीफ़ क्यों फ़रमाई? आपने अपने बेटे की तरह कैरियर बना लिया होता, शुरू से इस बात की फ़िक्र नहीं कि बच्चे को दीन की तालीम सिखाई जाये, आज यह हाल है कि पैदा होते ही बच्चे को ऐसी नर्सरी में भेज दिया जाता है जहां उसको कुत्ता बिल्ली सिखाया जाता है, लेकिन अल्लाह का नाम नहीं सिखाया जाता, दीन की बातें नहीं सिखाई जातीं, इस वक़्त तक वह नस्ल तैयार होकर हमारे सामने आ चुकी है, और उसने सत्ता की डोर संभाल ली है, ज़िन्दगी की बाग डोर उसके हाथों में आ गयी है, जिसने पैदा होते ही स्कूल कालेज की तरफ़ रुख़ किया, और उनके अन्दर नाज़रा कुरआन शरीफ़ पढ़ने की भी अहलियत मौजूद नहीं, नमाज़ पढ़ना नहीं आता, अगर इस वक़्त पूरे मुआशरे (समाज) का जायज़ा लेकर देखा जाये तो शायद अक्सरियत ऐसे लोगों की मिले जो कुरआन शरीफ़ नाज़रा नहीं पढ़ सकते, जिन्हें नमाज़ सही तरीक़े से पढ़नी नहीं आती, वजह इसकी यह है कि बच्चे के पैदा होते ही मां बाप ने यह फ़िक्र तो की कि उसको कौन से इंग्लिश मीडियम स्कूल में दाख़िल किया जाये लेकिन दीन की तरफ़ ध्यान और फ़िक्र नहीं।

आज औलाद मां बाप के सर पर सवार हैं

याद रखो! अल्लाह तबारक व तआला की एक सुन्नत है, जो हदीस शरीफ़ में बयान की गयी है कि जो शख़्स किसी मख़्लूक को राज़ी करने के लिये अल्लाह को नाराज़ करे तो अल्लाह तआला उसी मख़्लूक़ को उस पर मुसल्लत फ़रमा देते हैं। जैसे एक शख़्स ने एक मख़्लूक़ को राज़ी करने के लिये गुनाह किया, और गुनाह करके अल्लाह तआला को नाराज़ किया, तो आख़िर कार अल्लाह तआला उसी मख़्लूक़ को उस पर मुसल्लत फ़रमा देते हैं, तजुर्बा करके देखो।

आज हमारी सूरते हाल यह है कि अपनी औलाद और बच्चों को राज़ी करने की ख़ातिर यह सोचते हैं कि उनका कैरियर अच्छा हो जाये, उनकी आमदनी अच्छी हो जाये और मुआशरे में उनका एक मक़ाम बन जाये, इन तमाम कामों की वजह से उनको दीन न सिखाया, और दीन न सिखा कर अल्लाह तआला को नाराज़ किया, उसका नतीजा यह हुआ कि वही औलाद जिसको राज़ी करने की फ़िक्र थी वही औलाद मां बाप के सर पर मुसल्लत हो जाती है। आज आप ख़ुद मुआशरे के अन्दर देख लें कि किस तरह औलाद अपने मां बाप की ना फ़रमानी कर रही है। और मां बाप के लिये अज़ाब बनी हुयी है, वजह इसकी यह है कि मां बाप ने उनको सिर्फ़ इसलिये बेदीनी के माहौल में भेज दिया ताकि उनको अच्छा खाना मयस्सर आ जाये, और अच्छी नौकरी मिल जाये, और उनको ऐसे बेदीनी के माहौल में आज़ाद छोड़ दिया जिसमें मां बाप की इज़्ज़त और अज़्मत का कोई ख़ाना नहीं है, जिसमें मां

बाप के हुक्म की इताअत का भी कोई ख़ाना नहीं है, वह अगर कल को अपनी नफ़सानी ख़्वाहिशात के मुताबिक़ फ़ैसले करता है, तो अब मां बाप बैठे रो रहे हैं, कि हमने तो इस मक़सद के लिये तालीम दिलायी थी, मगर उसने यह कर लिया, अरे बात असल में यह है कि तुमने उसको ऐसे रास्ते पर चलाया, जिसके नतीजे में वह तुम्हारे सरों पर मुसल्लत हो, तुम उनको जिस क़िस्म की तालीम दिलवा रहे हो, और जिस रास्ते पर लेजा रहे हो, उस तालीम की तहज़ीब तो यह है कि जब मां बाप बूढ़े हो जायें तो अब वे घर में रखने के लायक़ नहीं, उनको नर्सिंगहोम (Nursing Home) में दाख़िल कर दिया जाता है और फिर साहिबज़ादे पलट कर भी नहीं देखते कि वहां मां बाप किस हाल में हैं, और किस चीज़ की उनको ज़रूरत है।

बाप "नर्सिंग होम" में

पश्चिमी देशों के बारे में तो ऐसे वाक़िआत बहुत सुनते थे कि बूढ़ा बाप "नर्सिंग होम" में पड़ा है, वहां उस बाप का इन्तिक़ाल हो गया, वहां के मैनेजर ने साहिबज़ादे को फ़ोन किया कि जनाब! आपके वालिद साहिब का इन्तिक़ाल हो गया है, तो जवाब में साहिबज़ादे ने कहा कि मुझे बड़ा अफ़्सोस है कि उनका इन्तिक़ाल हो गया। अब आप मेहरबानी फ़रमा कर उनकी तज्हीज़ व तक्फ़ीन (अंतिम संसकार) का इन्तिज़ाम कर दें। और मेहरबानी फ़रमा कर बिल मुझे भेज दीजिये मैं बिल की अदायगी कर दूंगा। वहां के बारे में तो यह बात सुनी थी लेकिन अभी कुछ दिन पहले मुझे एक साहिब ने बताया कि

यहां कराची में भी एक "नर्सिंग होम" क़ायम हो गया है, जहां बूढ़ों की रिहाइश का इन्तिज़ाम है, उसमें भी यही वाक़िआ पेश आया कि एक साहिब का वहां इन्तिक़ाल हो गया। उसके बेटे को इत्तिला दी गयी, बेटे साहिब ने पहले तो आने का वादा कर लिया, लेकिन बाद में माज़िरत करते हुए कहा कि मुझे फ़लां मीटिंग में जाना है इसलिये आप ही उसके कफ़न दफ़न का बन्दोबस्त कर दें, मैं नहीं आ सकूंगा। यह वह औलाद है जिसको राज़ी करने की ख़ातिर तुमने ख़ुदा को नाराज़ किया, इसलिये वह अब तुम्हारे ऊपर मुसल्लत कर दी गयी। जैसाकि हदीस में साफ़ मौज़ूद है कि जिस मख़्लूक़ को राज़ी करने के लिये ख़ुदा को नाराज़ करोगे अल्लाह तआला उसी मख़्लूक़ को तुम्हारे ऊपर मुसल्लत कर देंगे।

जैसा करोगे वैसा भरोगे

जब वह औलाद सर पर मुसल्लत हो गयी तो अब मां बाप रो रहे हैं कि औलाद दूसरे रास्ते पर जा रही है, अरे जब तुमने शुरू ही से उसको ऐसे रास्ते पर डाला, जिसके ज़रिये उसका ज़ेहन बदल जाये, उसका ख़्याल बदल जाये, उसकी सोच बदल जाये तो उसका अन्जाम यही होना था:

अन्दरूने क़अ्रे दरिया तख़्ता बन्दम करदा ई
बाज़ मी गोई कि दामन तर मकुन होशियार बाश

"पहले मेरे हाथ पांव बांध कर मुझे समुंदर के अन्दर डुबो दिया, उसके बाद कहते हो कि होशियार! दामन तर मत करना। भाई: अगर तुमने पहले उसे कुछ कुरआन शरीफ़ पढ़ाया होता, उसको कुछ हदीस नबवी सिखाई होती, वह

हदीस सिखाई होती जिसमें रसूले करीम सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ने इरशाद फ़रमाया कि आदमी जब दुनिया से चला जाता है तो तीन चीज़ें उसके लिये कार–आमद होती हैं, एक इल्म है जिसे वह छोड़ गया, जिस से लोग नफ़ा उठा रहे हैं। कोई आदमी कोई किताब लिख गया और लोग उससे फ़ायदा उठा रहे हैं, या कोई आदमी इल्मे दीन पढ़ाता था, अब उसके शागिर्द आगे इल्म पढ़ा रहे हैं, इससे उस मरने वाले शख़्स को भी फ़ायदा पहुंचता रहता है। या कोई सदक़ा–ए–जारिया छोड़ गया, जैसे कोई मस्जिद बना दी, कोई मदरसा बना दिया, कोई शिफ़ाख़ाना बना दिया, कोई कुआं बना दिया, और लोग उससे फ़ायदा उठा रहे हैं। ऐसे अ़मल का सवाब मरने के बाद भी जारी रहता है। और तीसरी चीज़ नेक औलाद है, जो वह छोड़ गया, वह उसके हक़ में दुआ़यें करे, तो उसका अ़मल मरने के बाद भी जारी रहता है, क्योंकि मां बाप की तरबियत के नतीजे में औलाद जो कुछ कर रही है, वह सब मां बाप के नामा–ए–आमाल में लिखा जा रहा है। अगर यह हदीस पढ़ाई होती तो आज बाप का यह अन्जाम न होता। लेकिन चूंकि इस रास्ते पर चलाया ही नहीं, इसलिये इसका बुरा अन्जाम आंखों के सामने है।

हज़राते अंबिया और औलाद की फ़िक्र

भाई! औलाद को दीन की तरफ़ लाने की फ़िक्र इतनी ही लाज़मी है जितनी अपनी इस्लाह की फ़िक्र लाज़िम है, औलाद को सिर्फ़ ज़बानी समझाना काफ़ी नहीं। जब तक उसकी फ़िक्र उसकी तड़प इस तरह न हो जिस तरह अगर धहकती हुयी

आग की तरफ़ बच्चा बढ़ रहा हो, और आप लपक कर जब तक उठा न लेंगे, उस वक़्त तक आपको चैन नहीं आयेगा। इसी तरह की तड़प यहां भी होनी ज़रूरी है। पूरा कुरआने करीम इस हुक्म की ताकीद से भरा हुआ है, चुनांचे अंबिया अलैहिमुस्सलाम के वाक़िआत का ज़िक्र फ़रमाते हुये अल्लाह तआला इरशाद फ़रमाते हैं कि:

"وَكَانَ يَأْمُرُ أَهْلَهُ بِالصَّلَاةِ وَالزَّكُوةِ" (سورة مريم)

"यानी हज़रत इस्माईल अलैहिस्सलाम अपने घर वालों को नमाज़ और ज़कात का हुक्म दिया करते थे। हज़रत याकूब अलैहिस्सलाम के बारे में फ़रमाया कि जब उनका इन्तिक़ाल होने लगा तो अपनी सारी औलाद और बेटों को ज़मा किया। कोई शख़्स अपनी औलाद को इस फ़िक्र के लिये जमा करता है कि मेरे मरने के बाद तुम्हारा क्या होगा? किस तरह कमाओगे? लेकिन हज़रत याकूब अलैहिस्सलाम अपनी औलाद को जमा कर रहे हैं और यह पूछ रहे हैं कि बताओ! मेरे मरने के बाद तुम किस की इबादत करोगे? उनको अगर फ़िक्र है तो इबादत की फ़िक्र है। बस! अपनी औलाद, अपने घर वालों के बारे में इस फ़िक्र को पैदा करने की ज़रूरत है।

(सूरः बक़रः १३३)

क़ियामत के दिन मातहतों के बारे में सवाल होगा

बात सिर्फ़ अह्ल व अ़याल (घर वालों और बाल बच्चों) की हद तक महदूद नहीं, बल्कि जितने मातहत हैं, जिन पर इन्सान अपना असर डाल सकता है। जैसे एक शख़्स किसी जगह अफ़सर है और कुछ लोग उसके मातहत काम कर रहे हैं।

क़ियामत के दिन उस शख़्स से सवाल होगा कि तुमने अपने मातहतों को दीन पर लाने की कोशिश की थी? एक उस्ताद है उसके मातहत बहुत से शागिर्द पढ़ते हैं, क़ियामत के दिन उस उस्ताद से सवाल होगा कि तुमने अपने शागिर्दों को सीधे रास्ते पर लाने के सिलसिले में क्या काम किया? एक उज्रत पर काम कराने वाला है उसके मातहत बहुत से मज़दूर मेहनत मज़दूरी करते हैं, क़ियामत के दिन उस उज्रत पर काम कराने वाले से सवाल होगा कि तुमने अपने मातहतों को दीन पर लाने के सिलसिले में क्या कोशिश की थी? जैसाकि हदीस शरीफ़ में है कि:

"كلكم راع وكلكم مسئول عن رعيته" (جامع الاصول)

"यानी तुम में से हर शख़्स राओ़ी और निगहबान है, और उससे उसकी रअ़िय्यत के बारे में सवाल होगा"।

ये गुनाह हक़ीक़त में आग हैं

यह आयत जो मैंने शुरू में तिलावत की इस आयत के तहत मेरे वालिद माजिद हज़रत मुफ़्ती मुहम्मद शफ़ी साहिब रहमतुल्लाहि अ़लैहि फ़रमाया करते थे कि इस आयत में अल्लाह तआ़ला ने यह जो फ़रमाया कि ऐ ईमान वालो! अपने आपको और अपने घर वालों को आग से बचाओ, यह इस तरह कहा जा रहा है जैसे कि आग सामने नज़र आ रही है। हालांकि इस वक़्त कोई आग भड़कती हुयी नज़र नहीं आ रही है, बात असल में यह है कि ये जितने गुनाह होते हुये नज़र आ रहे हैं ये सब हक़ीक़त में आग हैं। चाहे देखने में ये गुनाह लज़ीज़ और अच्छे लगने वाले

मालूम हो रहे हों, लेकिन हक़ीक़त में ये सब आग हैं। और यह दुनिया जो गुनाहों से भरी हुयी है, वह इन गुनाहों की वजह से जहन्नम बनी हुयी है। लेकिन हक़ीक़त में गुनाहों से मानूस होकर हमारी हिस मिट गयी है, इसलिये गुनाहों की ज़ुल्मत (अंधेरा) और आग महसूस नहीं होती। वर्ना जिन लोगों को अल्लाह तआला सही हिस अ़ता फ़रमाते हैं और ईमान का नूर अ़ता फ़रमाते हैं उनको ये गुनाह हक़ीक़त में आग की शक्ल में नज़र आते हैं या ज़ुल्मत (अंधेरा) की शक्ल में नज़र आते हैं।

हराम के एक लुक़्मे का नतीजा

दारुल उलूम देवबन्द के सद्र मुदर्रिस, हज़रत थानवी रहमतुल्लाहि अ़लैहि के उस्ताद हज़रत मौलाना मुहम्मद याक़ूब साहिब नानौतवी रहमतुल्लाहि अ़लैहि फ़रमाते हैं कि एक मर्तबा एक शख़्स की दावत पर उसके घर खाना खाने चला गया, अभी सिर्फ़ एक ही लुक़्मा खाया था कि यह एहसास हो गया कि खाने में कुछ गड़बड़ है, शायद यह हलाल की आमदनी नहीं है, जब तहक़ीक़ की तो मालूम हुआ कि हक़ीक़त में हलाल आमदनी नहीं थी, लेकिन वह हराम आमदनी का लुक़्मा ना-दानिस्ता तौर पर हलक़ के अन्दर चला गया। हज़रत मौलाना फ़रमाते थे कि मैंने उस पर तौबा इस्तिग़फ़ार की लेकिन इसके बावुजूद दो महीने तक उस हराम लुक़्मे की ज़ुलमत (अंधेरा) महसूस होती रही, और दो महीने तक बार बार यह ख़्याल और वस्वसा आता रहा कि फ़लां गुनाह कर लो, और गुनाह के जज़्बात दिल में पैदा होते रहे। अल्लाह तआला जिन लोगों के दिलों को पाक, रोशन और

साफ़ फ़रमाते हैं उन्हें इन गुनाहों की ज़ुल्मत का एहसास होता है। हम लोग चूंकि इन गुनाहों से मानूस हो गये हैं इसलिये हमें मालूम नहीं होता।

अन्धेरे के आदी हो गये हैं

हम लोग यहां शहरों में बिजली के आदी हो गये हैं, हर वक़्त शहर बिजली से जगमगा रहा है, अब अगर चन्द मिनट के लिए बिजली चली जाये तो तबीयत पर भारी गुज़रता है, इसलिये कि निगाहें बिजली की रोशनी और उसकी राहत की आदी हैं, जब वह राहत छिन जाती है तो सख़्त तक्लीफ़ होती है, और वह ज़ुल्मत बुरी लगती है, लेकिन बहुत से देहात ऐसे हैं कि वहां के लोगों ने बिजली की शक्ल तक नहीं देखी, वहां हमेशा अन्धेरा रहता है। कभी बिजली के कुम्कुमे वहां जलते ही नहीं हैं उनको कभी अन्धेरे की तक्लीफ़ नहीं होती, इसलिये कि उन्हों ने बिजली के कुम्कुमों की रोशनी देखी ही नहीं। लेकिन जिसने यह रोशनी देखी है, उससे जब यह रोशनी छिन जाती है, तो उसको तक्लीफ़ होती है।

यही हमारी मिसाल है कि हम सुबह व शाम गुनाह करते रहते हैं और इन गुनाहों की ज़ुल्मत के आदी हो गये हैं, इसलिये ज़ुल्मत का एहसास नहीं होता, अल्लाह तआला हमें ईमान का नूर अता फ़रमाये, तक्वे का नूर अता फ़रमाये, तब हमें मालूम होगा कि इन गुनाहों के अन्दर कितनी ज़ुल्मत है, हज़रत वालिद साहिब रहमतुल्लाहि अलैहि फ़रमाते हैं कि ये गुनाह हक़ीक़त में आग ही हैं, इसी लिये क़ुरआने करीम ने फ़रमाया कि:

"اِنَّ الَّذِيْنَ يَاْكُلُوْنَ اَمْوَالَ الْيَتَامٰى ظُلْمًا اِنَّمَا يَاْكُلُوْنَ فِىْ بُطُوْنِهِمْ نَارًا"
(سورة النساء: ١٠)

"यानी जो लोग यतीमों का माल जुल्म करके खाते हैं, वे हक़ीक़त में अपने पेटों में आग खा रहे हैं, इस आयत के तहत अक्सर मुफ़स्सिरीन ने यह फ़रमाया कि यह मजाज़ और इस्तिआ़रा है कि आग खा रहे हैं, यानी हराम खा रहे हैं। जिसका अन्जाम आख़िर कार जहन्नम की आग की शक्ल में उनके सामने आयेगा, लेकिन कुछ मुफ़स्सिरीन ने बयान फ़रमाया कि यह मजाज़ और इस्तिआ़रा नहीं है बल्कि यह हक़ीक़त है, यानी वे हराम का जो लुक़्मा खा रहे हैं, वह वाक़ई आग है, लेकिन इस वक़्त बेहिसी की वजह से आग मालूम नहीं हो रही है। इसलिये जितने गुनाह हमारे चारों तरफ़ फैले हुये हैं, वे हक़ीक़त में आग हैं, हक़ीक़त में दोज़ख़ के अंगारे हैं। लेकिन हमें अपनी बेहिसी की वजह से नज़र नहीं आते।

अल्लाह वालों को गुनाह नज़र आते हैं

अल्लाह तआ़ला जिन लोगों को बातिनी रोशनी अ़ता फ़रमाते हैं, उन्हें इनकी हक़ीक़त नज़र आती है। हज़रत इमाम अबू हनीफ़ा रहमतुल्लाहि अ़लैहि के बारे में सही और मोतबर रिवायतों में है कि जिस वक़्त कोई आदमी वुज़ू कर रहा होता, या गुस्ल कर रहा होता तो आप उसके बहते हुये पानी में गुनाहों की शक्लें देख लेते थे कि ये फ़लां फ़लां गुनाह बहते हुये जा रहे हैं।

एक बुज़ुर्ग थे जब वह अपने घर से बाहर निकलते तो चेहरे पर कपड़ा डाल लेते थे। किसी शख़्स ने उन बुज़ुर्ग से

पूछा कि हज़रत! आप जब भी बाहर निकलते हैं तो चेहरे पर कपड़ा डाल कर निकलते हैं इसकी क्या वजह है? उन बुज़ुर्ग ने जवाब में फ़रमाया कि मैं कपड़ा उठा कर बाहर निकलने पर क़ादिर नहीं, इसलिये कि जब मैं बाहर निकलता हूं तो किसी इन्सान की शक्ल नज़र नहीं आती, बल्कि ऐसा नज़र आता है कि कोई कुत्ता है कोई सुअर है, कोई भेड़िया है, कोई गधा है, और मुझे इन्सानों की शक्लें इन सूरतों में नज़र नहीं आती हैं। इसकी वजह यह है कि गुनाह इन शक्लों की सूरत इख़्तियार करके सामने आ जाते हैं। बहर हाल! चूंकि इन गुनाहें की हक़ीक़त हम पर ज़ाहिर नहीं है, इसलिये हम इन गुनाहों को लज़्ज़त और राहत का ज़रिया समझते हैं। लेकिन हक़ीक़त में वह गन्दगी है, हक़ीक़त में वह नजासत (नापाकी) है, हक़ीक़त में वह आग है, हक़ीक़त में वह ज़ुल्मत है।

यह दुनिया गुनाहों की आग से भरी हुई है

हज़रत वालिद साहिब रह़्मतुल्लाहि अ़लैहि फ़रमाया करते थे कि यह दुनिया जो गुनाहों की आग से भरी हुयी है, इसकी मिसाल बिल्कुल ऐसी है जैसे किसी कमरे में गैस भर गयी हो, अब वह गैस हक़ीक़त में आग है, सिर्फ़ दिया सलाई लगाने की देर है, एक दिया सलाई दिखाओगे तो पूरा कमरा आग से दहक जायेगा, इसी तरह ये बद आमालियां, ये गुनाह जो मुआशरे के अन्दर फैले हुये हैं, हक़ीक़त में आग हैं, सिर्फ़ एक सूर फूंकने की देर है, जब सूर फूंका जायेगा तो यह मुआशरा आग से दहक जायेगा, हमारे ये बुरे आमाल भी हक़ीक़त में जहन्नम है, इनसे अपने आपको भी बचाओ, और अपने अह्ल व

अयाल (घर वालों) को भी बचाओ।

पहले ख़ुद नमाज़ की पाबन्दी करो

अल्लामा नववी रहमतुल्लाहि अलैहि ने दूसरी आयत यह बयान फ़रमाई है कि:

"وَأْمُرْ أَهْلَكَ بِالصَّلَاةِ وَاصْطَبِرْ عَلَيْهَا" (طه:١٣٢)

यानी अपने घर वालों को नमाज़ का हुक्म दो, और ख़ुद भी इस नमाज़ की पाबन्दी करो, इस आयत में अल्लाह तआला ने अजीब तरतीब रखी है, बज़ाहिर यह होना चाहिये था कि पहले ख़ुद नमाज़ क़ायम करो और फिर अपने घर वालों को नमाज़ का हुक्म दो, लेकिन यहां तरतीब उलट दी है कि पहले अपने घर वालों को नमाज़ का हुक्म दो, और फिर ख़ुद भी इसकी पाबन्दी करो, इस तरतीब में इस बात की तरफ़ इशारा फ़रमा दिया कि तुम्हारा अपने घर वालों को या औलाद को नमाज़ का हुक्म देना उस वक़्त तक असरदार और फ़ायदेमन्द नहीं होगा, जब तक तुम उनसे ज़्यादा पाबन्दी नहीं करोगे, अब ज़बान से तो तुमने उनको कह दिया कि नमाज़ पढ़ो लेकिन ख़ुद अपने अन्दर नमाज़ की पाबन्दी नहीं है, तो इस सूरत में उनको नमाज़ के लिये कहना बिल्कुल बेकार जायेगा। इसलिये अपने घर वालों को नमाज़ का हुक्म देने का एक लाज़मी हिस्सा यह है कि उनसे ज़्यादा पाबन्दी ख़ुद करो, और उनके लिये एक मिसाल और नमूना बनो।

बच्चों के साथ झूठ मत बोलो

हदीस शरीफ़ में है कि हुज़ूरे अक़्दस सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम के सामने एक औरत ने अपने बच्चे को गोद में लेने के

लिये बुलाया, बच्चा आने में तरद्दुद कर रहा था, तो उस औरत ने कहा! तुम हमारे पास आओ, हम तुम्हें कुछ चीज़ देंगे। अब वह बच्चा आ गया, आं हज़रत सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ने उस औरत से पूछा कि तुमने बच्चे को यह जो कहा कि हमारे पास आओ हम तुम्हें कुछ चीज़ देंगे, तो क्या तुम्हारी वाक़ई कुछ देने की नियत थी? उस औरत ने जवाब दिया कि या रसूलल्लाह! मेरे पास एक खजूर थी और यह खजूर इसको देने की नियत थी। आपने फ़रमाया कि अगर देने की नियत न होती तो यह तुम्हारी तरफ़ से बहुत बड़ा झूठ होता, और गुनाह होता। इसलिये कि तुम बच्चे से झूठा वादा कर रही हो, गोया उसके दिल में बचपन से यह बात डाल रही हो कि झूठ बोलना और वादा ख़िलाफ़ी करना कोई ऐसी बुरी बात नहीं होती। इसलिये इस आयत में इस बात की तरफ़ इशारा फ़रमाया कि बीवी बच्चों को जो भी हुक्म दो पहले ख़ुद उस पर अमल करो, और उसकी पाबन्दी दूसरों से ज़्यादा करो।

बच्चों को तरबियत देने का अन्दाज़

आगे अल्लामा नववी रह्मतुल्लाहि अलैहि हदीसें लाये हैं।

"عن ابی هریرة رضی اللّٰہ تعالی عنه قال: اخذ الحسن بن علی رضی الله عنهما تمرة من تمر الصدقة فجعلها فی فیه فقال رسول الله صلی الله علیه وسلم: کخ کخ، ارم بها، اما علمت انا لا نأکل الصدقة"

(جامع الاصول)

हज़रत अबू हुरैरह रज़ियल्लाहु अन्हु फ़रमाते हैं कि हज़रत फ़ातिमा और हज़रत अली रज़ियल्लाहु अन्हुमा के साहिबज़ादे हज़रत हसन रज़ियल्लाहु अन्हु जबकि अभी बच्चे थे। एक

मर्तबा सदके की खजूरों में से एक खजूर उठा कर अपने मुंह में रख ली, जब हुज़ूरे अक्दस सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ने देखा तो फ़ौरन फ़रमायाः "कख़ कख़" अ़र्बी में यह लफ़्ज़ ऐसा है जैसे हमारी ज़बान में "थू थू" कहते हैं, यानी अगर बच्चा कोई चीज़ मुंह में डाल ले, और उसकी बुराई के इज़हार के साथ वह चीज़ उसके मुंह से निकलवाना मक़्सूद हो तो यह लफ़्ज़ इस्तेमाल किया जाता है। बहर हाल! हुज़ूरे अक्दस सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ने फ़रमाया कि "कख़ कख़" यानी उसको मुंह से निकाल कर फेंक दो, क्या तुम्हें मालूम नहीं कि हम यानी हाशिम की औलाद सदके का माल नहीं खाते।

हज़रत हसन रज़ियल्लाहु अ़न्हु हुज़ूरे अक्दस सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम के नवासे हैं। और ऐसे महबूब नवासे हैं कि एक मर्तबा हुज़ूरे अक्दस सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम मस्जिदे नबवी में ख़ुतबा दे रहे थे, उस वक़्त हज़रत हसन रज़ियल्लाहु अ़न्हु मस्जिद में दाख़िल हो गये। तो हुज़ूरे अक्दस सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम मिंबर से उतरे, और आगे बढ़ कर उनको गोद में उठा लिया। और बाज़ मर्तबा ऐसा भी होता कि हुज़ूरे अक्दस सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम नमाज़ पढ़ रहे हैं और यह हज़रत हसन रज़ियल्लाहु अ़न्हु आपके कन्धे पर सवार हो गये और जब आप सज्दे में जाने लगे तो आपने उनको एक हाथ से पकड़ कर नीचे उतार दिया, और कभी ऐसा भी होता कि आप उनको गोद में लेते और फ़रमाते किः

"مبخلة ومجبنة"

यानी यह औलाद ऐसी है कि इन्सान को बख़ील भी बना

देती है, और बुज़्दिल (डरपोक) भी बना देती है। इसलिये कि इन्सान औलाद की वजह से कभी कभी बख़ील बन जाता है, और कभी कभी बुज़्दिल बन जाता है। एक तरफ़ तो हुज़ूरे अक़्दस सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम को हज़रत हसन रज़ियल्लाहु अ़न्हु से इतनी मुहब्बत है, दूसरी तरफ़ जब उन्हों ने नादानी में एक खजूर भी मुंह में रख ली तो आं हज़रत सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम को यह गवारा न हुआ कि वह उस खजूर को खायें। मगर चूंकि उनको पहले से इस चीज़ की तरबियत देनी थी, इसलिये फ़ौरन वह खजूर मुंह से निकलवाई, और फ़रमाया कि यह हमारे खाने की चीज़ नहीं है।

बच्चों से मुहब्बत की हद

इस हदीस में इस बात की तरफ़ इशारा फ़रमा दिया कि बच्चे की तरबियत छोटी छोटी चीज़ों से शुरू होती है। इसी से उसका ज़ेहन बनता है, इसी से उसकी ज़िन्दगी बनती है। यह हुज़ूरे अक़्दस सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम की सुन्नत है। आज कल यह अ़जीब मन्ज़र देखने में आता है कि मां बाप के अन्दर बच्चों को ग़लत बातों पर टोकने का रिवाज ही ख़त्म हो गया है। आज से पहले भी मां बाप बच्चों से मुहब्बत करते थे, लेकिन वे अक़्ल और तदबीर के साथ मुहब्बत करते थे। लेकिन आज यह मुहब्बत और लाड इस दर्जा तक पहुंच चुका है कि बच्चे कितने ही ग़लत काम करते रहें, ग़लत हर्कतें करते रहें, लेकिन मां बाप उन ग़लतियों पर टोकते ही नहीं, मां बाप यह समझते हैं कि ये नादान बच्चे हैं इनको हर क़िस्म की छूट है, इनकी रोक टोक करने की ज़रूरत नहीं। अरे भाई! यह सोचो

कि अगर वे बच्चे नादान हैं मगर तुम तो नादान नहीं हो तुम्हारा फ़र्ज़ है कि उनको तरबियत दो, अगर कोई बच्चा अदब के ख़िलाफ़, तमीज़ के ख़िलाफ़ या शरीअत के ख़िलाफ़ कोई ग़लत काम कर रहा है तो उसको बताना मां बाप के ज़िम्मे फ़र्ज़ है, इसलिये कि वह बच्चा इसी तरह बद तमीज़ बन कर बड़ा हो गया तो उसका वबाल तुम्हारे ऊपर है कि तुमने उसको शुरू से इसकी आदत नहीं डाली। बहर हाल! इस हदीस को यहां लाने का मक़्सद यह है कि बच्चों की छोटी छोटी हर्कतों को भी निगाह में रखो।

हज़रत शैख़ुल हदीस रह० का एक वाक़िआ

शैख़ुल हदीस हज़रत मौलाना मुहम्मद ज़करिया साहिब रह्मतुल्लाहि अलैहि ने "आप बीती" में अपना एक क़िस्सा लिखा है कि जब मैं छोटा बच्चा था तो मां बाप ने मेरे लिये एक छोटा सा ख़ूबसूरत तकिया बना दिया था, जैसा कि आम तौर पर बच्चों के लिये बनाया जाता है, मुझे उस तकिये से बहुत मुहब्बत थी, और हर वक़्त मैं उसको अपने साथ रखता था। एक दिन मेरे वालिद साहिब लेटना चाह रहे थे, उनको तकिये की ज़रूरत पेश आयी तो मैंने वालिद साहिब से कहा कि: अब्बा जी! मेरा तकिया ले लीजिये, यह कह कर मैंने अपना तकिया उनको इस तरह पेश किया जिस तरह कि मैंने अपना दिल निकाल कर बाप को दे दिया, लेकिन जिस वक़्त वह तकिया मैंने उकनो पेश किया, उसी वक़्त वालिद साहिब ने मुझे एक चपत रसीद किया और कहा कि अभी से तू इस तकिये को अपना तकिया कहता है, मक़्सद यह था कि तकिया

तो हकीकत में बाप की अता (देन) है, इसलिये इसको अपनी तरफ़ मंसूब करना या अपना क़रार देना ग़लत है। हज़रत शैख़ुल हदीस रहमतुल्लाहि अलैहि लिखते हैं कि उस वक़्त तो मुझे बहुत बुरा लगा कि मैंने अपना दिल निकाल कर बाप को दे दिया था, इसके जवाब में बाप ने एक चपत लगा दिया, लेकिन आज समझ में आया कि कितनी बारीक बात पर उस वक़्त वालिद साहिब ने तंबीह फ़रमाई थी। और उसके बाद ज़ेहन का रुख़ बदल गया। इस क़िस्म की छोटी छोटी बातों पर मां बाप को नज़र रखनी पड़ती है, तब जाकर बच्चे की तरबियत सही होती है, और बच्चा सही तौर पर उभर कर सामने आता है।

खाना खाने का एक अदब

"عن ابی حفص عمربن ابی سلمة عبد الله بن عبد الاسد ربیب رسول الله صلی الله علیه وسلم قال: كنت غلامًا فی حجر رسول الله صلی الله علیه وسلم، وكانت یدی تطیش فی الصحفة، فقال لی رسول الله صلی الله علیه وسلم: یا غلام سم الله، وكل بیمینك، وكل مما یلیك، فمازالت تلك طعمتی بعد. (جامع الاصول)

हज़रत उमर बिन अबू सलमा रज़ियल्लाहु अन्हु आं हज़रत सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम के सौतेले बेटे हैं। हज़रत उम्मे सलमा रज़ियल्लाहु अन्हा जो उम्मुल मोमिनीन हैं, उनके पिछले शौहर से यह साहिबज़ादे पैदा हुए थे। जब हुज़ूरे अक़्दस सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ने हज़रत उम्मे सलमा रज़ियल्लाहु अन्हा से निकाह फ़रमाया तो यह उनके साथ ही हुज़ूरे अक़्दस सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम के पास आये थे,

इसलिये यह हुज़ूर सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम के रबीब यानी सौतेले बेटे थे, आं हज़रत सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम इनसे बड़ी मुहब्बत व शफ़्क़त फ़र्माया करते थे, और इनके साथ बड़ी बे–तकल्लुफ़ी की बातें किया करते थे। वह फ़रमाते हैं कि जिस वक़्त मैं छोटा बच्चा था और हुज़ूरे अक़्दस सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम के प्रवरिश में था, एक दिन खाना खाते हुए मेरा हाथ प्याले में इधर से उधर हर्कत कर रहा था, यानी कभी एक तरफ़ से लुक़्मा उठाया कभी दूसरी तरफ़ से लुक़्मा उठाया और कभी तीसरी तरफ़ से लुक़्मा उठाया। जब हुज़ूरे अक़्दस सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ने मुझे इस तरह करते हुए देखा तो फ़रमाया ऐ लड़के! खाना खाते वक़्त बिस्मिल्लाह पढ़ो और दाहिने हाथ से खाओ, और बर्तन का जो हिस्सा तुम्हारे सामने है वहां से खाओ, इधर उधर से हाथ बढ़ा कर खाना ठीक नहीं है, आं हज़रत सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम इस तरह की छोटी छोटी बातों को देख कर उस पर तंबीह फ़रमाते और सही अदब सिखाते।

ये इस्लामी आदाब हैं

एक और सहाबी हज़रत अकराश बिन ज़ुवैब रज़ियल्लाहु अ़न्हु फ़रमाते हैं, कि मैं एक मर्तबा हुज़ूरे अक़्दस सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम की ख़िदमत में हाज़िर हुआ, जब खाना सामने आया तो मैंने यह हर्कत शुरू की कि एक निवाला इधर से लिया, और दूसरा निवाला उधर से ले लिया। और इस तरह बर्तन के मुख़्तलिफ़ हिस्सों से खाना शुरू कर दिया। आं हज़रत सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ने मेरा हाथ पकड़ कर

फ़रमाया ऐ अ़कराश! एक जगह से खाओ, इसलिये कि खाना एक जैसा है, इधर उधर से खाने से बद तहज़ीबी भी मालूम होती है, और बद सलीक़ी ज़ाहिर होती है। इसलिये एक जगह से खाओ, हज़रत अ़कराश फ़रमाते हैं कि मैंने एक जगह से खाना शुरू कर दिया। जब खाने से फ़ारिग़ हुए तो एक बड़ा थाल लाया गया जिस में मुख़्तलिफ़ क़िस्म की खजूरें बिखरी हुयी थीं। जैसे मशहूर है कि दूध का जला हुआ छाछ को भी फूंक फूंक कर पीता है। चूंकि हुज़ूरे अक़्दस सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम मुझ से फ़रमा चुके थे कि एक जगह से खाओ, इसलिये मैंने वे खजूरें एक जगह से खानी शुरू कर दीं। और आं हज़रत सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम कभी एक तरफ़ से खजूर उठाते कभी दूसरी तरफ़ से उठाते, और मुझे जब एक तरफ़ से खाते हुए देखा तो आपने फ़रमाया कि ऐ अ़कराश! तुम जहां से चाहो खाओ, इसलिये कि ये मुख़्तलिफ़ क़िस्म की खजूरें हैं। अब अगर एक तरफ़ से खाते रहे, फिर दिल तुम्हारा दूसरी क़िस्म की खजूर खाने को चाह रहा है तो हाथ बढ़ा कर वहां से खजूर उठा कर खालो। (मिश्कात शरीफ़)

गोया कि इस ह़दीस में हुज़ूरे अक़्दस सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ने यह अदब सिखाया कि अगर एक ही क़िस्म की चीज़ है तो फिर सिर्फ़ अपनी तरफ़ से खाओ, और अगर मुख़्तलिफ़ क़िस्म की चीज़ें हैं तो दूसरी तरफ़ से भी खा सकते हो। अपनी औलाद और अपने सहाबा की इन छोटी छोटी बातों पर हुज़ूरे अक़्दस सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम की निगाह थी। ये सारे आदाब ख़ुद भी सीखने के हैं और अपने घर वालों को भी

सिखाने के हैं, ये इस्लामी आदाब हैं जिन से इस्लामी मुआशरा मुम्ताज़ होता है।

"عن عمروبن شعيب عن ابيه عن جده رضي الله عنه قال: قال رسول الله صلى الله عليه وسلم: مروا اولادكم بالصلاة وهم ابناء سبع واضربوهم عليها، وهم ابناء عشر، وفرقوا بينهم في المضاجع"

(جامع الاصول)

हज़रत अब्दुल्लाह बिन उमर रज़ियल्लाहु अन्हु रिवायत करते हैं कि नबी–ए–करीम सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ने इरशाद फ़रमाया कि अपनी औलाद को नमाज़ का हुक्म दो जब वे सात साल के हो जायें, यानी सात साल के बच्चे को नमाज़ पढ़ने की ताकीद करना शुरू करो, अगरचे उसके ज़िम्मे नमाज़ फ़र्ज़ नहीं हुयी, लेकिन उसको आदी बनाने के लिये सात साल की उमर से ताकीद करना शुरू कर दो, और जब दस साल की उमर हो जाये, और फिर भी नमाज़ न पढ़े तो उसको नमाज़ न पढ़ने पर मारो, और दस साल की उमर में बच्चों के बिस्तर अलग अलग कर दो, एक बिस्तर में दो बच्चों को न सुलाओ।

सात साल से पहले तालीम

इस हदीस में पहला हुक्म यह दिया कि सात साल की उमर से नमाज़ की ताकीद शुरू कर दो, इससे मालूम हुआ कि सात साल से पहले उसको किसी चीज़ का मुकल्लफ़ करना मुनासिब नहीं। हकीमुल उम्मत हज़रत मौलाना अशरफ़ अली थानवी रह्मतुल्लाहि अलैहि फ़रमाते हैं कि इस हदीस से यह बात मालूम होती है कि जब तक बच्चे की उमर सात साल

तक न पहुंच जाये, उस पर कोई बोझ न डालना चाहिये, जैसे कि बाज़ लोग सात साल से पहले रोज़े रखवाने की फ़िक्र शुरू कर देते हैं, हज़रत थानवी रहमतुल्लाहि अलैहि इसके बहुत मुख़ालिफ़ थे, हज़रत फ़रमाया करते थे कि अल्लाह मियां तो सात साल से पहले नमाज़ पढ़ाने को नहीं कह रहे हैं, मगर तुम सात साल से पहले उसको रोज़े रखवाने की फ़िक्र में हो, यह ठीक नहीं। इसी तरह सात साल से पहले नमाज़ की ताकीद की कोशिश भी दुरुस्त नहीं। इसी लिये कहा गया है कि सात साल से कम उमर के बच्चे को मस्जिद में लाना ठीक नहीं। लेकिन कभी कभार उसको इस शर्त के साथ मस्जिद में ला सकते हैं कि वह मस्जिद को गन्दगी वग़ैरह से गन्दा नहीं करेगा। ताकि वह थोड़ा थोड़ा मानूस हो जाये। लेकिन सात साल से पहले उस पर बाक़ायदा बोझ डालना दुरुस्त नहीं।

घर की तालीम दे दो

बल्कि हमारे बुज़ुर्ग फ़रमाते हैं कि सात साल से पहले तालीम का बोझ डालना भी मुनासिब नहीं। सात साल से पहले खेल कूद के अन्दर उसको पढ़ा दो, लेकिन बाक़ायदा उस पर तालीम का बोझ डालना और बाक़ायदा उसको तालिबे इल्म बना देना ठीक नहीं। आज कल हमारे यहां यह वबा है कि बच्चा तीन साल का हुआ तो उसको पढ़ाने की फ़िक्र शुरू हो गयी, यह ग़लत है। सही तरीक़ा यह है कि जब वह तीन साल का हो जाये तो उसको घर की तालीम दे दो। उसको अल्लाह व रसूल का कलिमा सिखा दो, उसको कुछ दीन की बातें समझा दो, और यह काम घर में रख कर जितना कर सकते

हो, कर लो। उसको मुकल्लफ़ करके बाक़ायदा नर्सरी में भेजना और नियमित तालिब इल्म बना देना दुरुस्त नहीं।

क़ारी फ़तह मुहम्मद सहिब रह्मतुल्लाहि अ़लैहि

हमारे बुज़ुर्ग हज़रत मौलाना क़ारी फ़तह मुहम्मद साहिब रह्मतुल्लाहि अ़लैहि, अल्लाह तआ़ला उनके दरजात बुलन्द फ़रमाये, आमीन। कुरआने करीम का ज़िन्दा मोजिज़ा थे, जिन लोगों ने उनकी ज़ियारत की है उनको मालूम होगा कि सारी ज़िन्दगी कुरआने करीम के अन्दर गुज़ारी, और हदीस में जो यह दुआ़ आती है कि या अल्लाह! कुरआने क़रीम को मेरी रग में शामिल कर दीजिये। मेरे ख़ून में शामिल कर दीजिये, मेरे जिस्म में जमा दीजिये, मेरी रूह में जमा दीजिये। ऐसा मालुम होता है कि हदीस की यह दुआ़ उनके हक़ में पूरी तरह कुबूल हो गयी कि कुरआने करीम उनके रग व पै में शामिल था।

क़ारी साहिब कुरआन की तालीम के मामले में बड़े सख़्त थे, जब कोई बच्चा उनके पास आता तो उसको बहुत एहतिमाम के साथ पढ़ाते थे, और उसको पढ़ने की बहुत ताकीद करते थे, लेकिन साथ साथ यह भी फ़रमाते थे कि जब तक बच्चे की उमर सात साल न हो जाये, उस वक़्त तक उस पर तालीम का बाक़ायदा बोझ डालना दुरुस्त नहीं, इसलिये कि इससे उसकी बढ़ोतरी और फूलना फलना रुक जाता है, और इसी ऊपर ज़िक्र हुई हदीस से इस्तिदलाल फ़रमाते थे कि हुज़ूरे अक़्दस सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ने बच्चों को नमाज़ का हुक्म देने के लिये सात साल उमर की क़ैद लगायी है।

जब बच्चा सात साल का हो जाये तो फिर रफ़्ता रफ़्ता

उस पर तालीम का बोझ डाला जाये। यहां तक कि जब बच्चा दस साल का हो जाये तो उस वक़्त आपने न सिर्फ़ तादीबन (अदब सिखाने और सज़ा देने के लिये) मारने की इजाज़त दी बल्कि मारने का हुक्म दिया, कि अब अगर वह नमाज़ न पढ़े तो उसको मारो।

बच्चों को मारने की हद

यह बात भी समझ लेनी चाहिये कि उस्ताद के लिये या मां बाप के लिये बच्चे को इस हद तक मारना जायज़ है जिस से बच्चे के जिस्म पर मार का निशान न पड़े। आज कल यह जो बेहिसाब मारने की रीत है यह किसी तरह भी जायज़ नहीं। जैसा कि हमारे यहां कुरआने करीम के मक्तबों में मार पिटाई का रिवाज है। और कभी कभी उस मार पिटाई में ख़ून निकल आता है, ज़ख़्म हो जाता है, या निशान पड़ जाता है, यह अ़मल इतना बड़ा गुनाह है कि हज़रत हकीमुल उम्मत मौलाना थानवी रह्मतुल्लाहि अ़लैहि फ़रमाया करते थे कि मुझे समझ में नहीं आता कि इस गुनाह की माफ़ी की क्या शक्ल होगी? इसलिये कि इस गुनाह की माफ़ी किस से मांगे? अगर उस बच्चे से माफ़ी मांगे तो वह ना-बालिग़ बच्चा माफ़ करने का अह्ल नहीं है, इसलिये कि अगर ना-बालिग़ बच्चा माफ़ भी कर दे तो भी शरअ़न उसकी माफ़ी का एतिबार नहीं, इसलिये हज़रते वाला फ़रमाया करते थे कि उसकी माफ़ी का कोई रास्ता समझ में नहीं आता, इतना ख़तरनाक गुनाह है। इसलिये उस्ताद और मां बाप को चाहिये कि वे बच्चे को इस तरह न मारें कि उससे ज़ख़्म हो जाये या निशान पड़ जाये, लेकिन ज़रूरत के तहत

जहां मारना लाज़मी हो जाये, सिर्फ़ उस वक़्त मारने की इजाज़त दी गयी है।

बच्चों को मारने का तरीक़ा

इसलिये हकीमुल उम्मत हज़रत मौलाना थानवी रहमतुल्लाहि अ़लैहि ने एक अ़जीब नुस्ख़ा बताया है, और ऐसा नुस्ख़ा वही बता सकते थे, याद रखने का है। फ़रमाते थे कि जब कभी औलाद को मारने की ज़रूरत महसूस हो, या उस पर ग़ुस्सा करने की ज़रूरत महसूस हो तो जिस वक़्त ग़ुस्सा आ रहा हो उस वक़्त न मारो, बल्कि ग़ुस्सा ठन्डा हो जाये तो उस वक़्त बनावटी ग़ुस्सा पैदा करके मार लो, इसलिये कि जिस वक़्त तबई ग़ुस्से के वक़्त अगर मारोगे या ग़ुस्सा करोगे तो फिर हद पर क़ायम नहीं रहोगे, बल्कि हद से बढ़ जाओगे, और चूंकि ज़रूरत से मारना है, इसलिये बनावटी ग़ुस्सा पैदा करके मार लो, ताकि असल मक़्सद भी हासिल हो जाये, और हद से गुज़रना भी न पड़े।

और फ़रमाया करते थे कि मैंने सारी उमर इस पर अ़मल किया कि तबई ग़ुस्से के वक़्त न किसी को मारा और न डांटा, फिर जब गुस्स ठन्डा हो जाता तो उसको बुला कर बनावटी क़िस्म का ग़ुस्सा पैदा करके वह मक़्सद हासिल कर लेता। ताकि हदों से बढ़ना न हो जाये। क्योंकि ग़ुस्सा एक ऐसी चीज़ है कि इसमें इन्सान अक्सर व बेश्तर हद पर क़ायम नहीं रहता।

बच्चों को तरबियत देने का तरीक़ा

इसी लिये हज़रत थानवी रहमतुल्लाहि अ़लैहि एक उसूल

बयान फ़रमाया करते थे। जो अगरचे कुल्ली उसूल तो नहीं है, इसलिये कि हालात अलग भी हो सकते हैं, लेकिन अक्सर व बेश्तर इस उसूल पर अ़मल किया जा सकता है कि जिस वक़्त कोई शख़्स ग़लत काम कर रहा हो, ठीक उस वक़्त में उसको सज़ा देना मुनासिब नहीं होता, बल्कि वक़्त पर टोकने से कभी कभी नुक़्सान होता है, इसलिये बाद में उसको समझा दो, या सज़ा देनी हो तो सज़ा दे दो। दूसरे यह कि हर हर काम पर बार बार टोकते रहना ठीक नहीं होता। बल्कि एक मर्तबा बिठा कर समझा दो कि फ़लां वक़्त तुमने यह ग़लत काम किया, फ़लां वक़्त यह ग़लत काम किया और फिर एक मर्तबा जो सज़ा देनी है दे दो। वाक़िआ यह है कि ग़ुस्सा हर इन्सान की फ़ित्रत में दाख़िल है, और यह ऐसा जज़्बा है कि जब एक मर्तबा शुरू हो जाये तो कभी कभी इन्सान इसमें बेक़ाबू हो जाता है और फिर हदों पर क़ायम रहना मुम्किन नहीं रहता, इसलिये इसका बेह्तरीन इलाज वही है, जो हमारे हज़रत थानवी रह्मतुल्लाहि अ़लैहि ने तज्वीज़ फ़रमाया। बहर हाल! इससे मालूम हुआ कि अगर ज़रूरत मह्सूस हो तो कभी कभी मारना चाहिये, आज कल इसमें कमी ज़्यादती है। अगर मारेंगे तो हद से गुज़र जायेंगे, या फिर बिल्कुल मारना छोड़ दिया है, और यह समझते हैं कि बच्चे को कभी नहीं मारना चाहिये, ये दोनों बातें ग़लत हैं वह ज़्यादती है, और यह कमी है, एतिदाल (दरमियान) का अकेला रास्ता वह है जो नबी–ए–करीम सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ने बयान फ़रमा दिया।

तुम में से हर शख़्स निगरां है

आख़िर में वही हदीस लाये हैं जो पीछे कई मर्तबा आ चुकी है।

"وعن ابن عمر رضى الله عنهما قال: سمعت رسول الله صلى الله عليه وسلم يقول: كلكم راع و كلكم مسئول عن رعيته، الامام راع ومسئول عن رعيته، والرجل راع فى اهله ومسئول عن رعيته، والمرأة راعيةفي بيت زوجها ومسئولة عن رعيتها، والخادم راع فى مال سيده ومسئول عن رعيته، فكلكم راع ومسئول عن رعيته"

(جامع الاصول)

हज़रत अ़ब्दुल्लाह बिन उमर रज़ियल्लाहु अ़न्हु से रिवयात है, फ़रमाते हैं कि मैंने हुज़ूरे अक़्दस सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम से सुना फ़रमाते हैं कि तुम में से हर शख़्स राई है, निगहबान है, ज़िम्मेदार है, और हर शख़्स से क़ियामत के दिन उसकी ज़िम्मेदारी और निगहबानी के बारे में सवाल होगा। इमाम यानी हाकिम ज़िम्मेदार है, और उससे उसकी रआ़िय्यत के बारे में आख़िरत में सवाल होगा कि तुमने उनके साथ कैसा बर्ताव किया? उनकी कैसी तरबियत की? और उनके हुकूक़ का कितना ख़्याल रखा? और मर्द अपने घर वालों का, बीवी बच्चों का निगरां और निगहबान है, क़ियामत के दिन उससे सवाल होगा कि बीवी बच्चे जो तुम्हारे सुपुर्द किये गये थे उनकी कैसी तरबियत की, उनके हुकूक़ किस तरह अदा किये? औ़रत अपने शौहर के घर की निगहबान है, जो चीज़ उसकी निगहबानी में दी गयी है उसके बारे में उससे क़ियामत के दिन सवाल होगा कि तुमने उसकी किस तरह निगहबानी की? और नौकर अपने

आक़ा के माल में निगहबान है, यानी अगर आक़ा ने पैसे दिये हैं तो वे पैसे उसके लिये अमानत है वह उसका ज़िम्मेदार है, और आख़िरत के दिन उससे उसके बारे में सवाल होगा कि तुमने उस अमानत का हक़ किस तरह अदा किया?

इसलिये तुम में से हर शख़्स किसी न किसी हैसियत से राओ़ी है और जिस चीज़ की निगहबानी उसके सुपुर्द की गयी है, क़ियामत के दिन उससे उसके बारे में सवाल होगा।

अपने मातहतों की फ़िक्र करें

इस हदीस को आख़िर में लाने की मन्शा यह है कि बात सिर्फ़ बाप और औलाद की हद तक महदूद नहीं, बल्कि ज़िन्दगी के जितने शोबे हैं, उन सब में इन्सान के मातहत कुछ लोग होते हैं, जैसे घर के अन्दर उसके मातहत बीवी बच्चे हैं, दफ़्तर में उसके मातहत कुछ अफ़राद काम करते होंगे, अगर कोई दुकानदार है, तो उस दुकान में उसके मातहत कोई आदमी काम करता होगा, अगर किसी शख़्स ने फ़ैक्ट्री लगायी है, तो उस फ़ैक्ट्री में उसके मातहत कुछ स्टाफ़ काम करता होगा, ये सब उसके मातहत और ताबे हैं इसलिये इन सब को दीन की बात पहुंचाना और उनको दीन की तरफ़ लाने की कोशिश करना इन्सान के ज़िम्मे ज़रूरी है। यह न समझे कि मैं अपनी ज़ात या अपने घर की हद तक ज़िम्मेदार हूं, बल्कि जो लोग तुम्हारे हाथ के नीचे और मातहत हैं, उनको जब तुम दीन की बात बताओगे तो तुम्हारी बात का बहुत ज़्यादा असर होगा, और उस असर को वे लोग क़ुबूल करेंगे। और अगर तुमने उनको दीन की बात नहीं बताई तो इसमें तुम्हारा क़ुसूर है।

और अगर वे दीन पर अमल नहीं कर रहे हैं तो इसमें तुम्हारा कुसूर है कि तुमने उनको दीन की तरफ़ मुतवज्जह नहीं किया। इसलिये जहां कहीं जिस शख़्स के मातहत कुछ लोग काम करने वाले मौजूद हैं उन तक दीन की बातें पहुंचाने की फ़िक्र करें।

सिर्फ़ दस मिनट निकाल लें

इसमें शक नहीं कि आज कल ज़िन्दगियां मसरूफ़ हो गयी हैं, वक़्त महदूद हो गये हैं, लेकिन हर शख़्स इतना तो कर सकता है कि चौबीस घन्टे में से पांच दस मिनट रोज़ाना इस काम के लिये निकाल ले कि अपने मातहतों को दीन की बात सुनायेगा। जैसे कोई किताब पढ़ कर सुना दे, कोई वाज़ (तक़रीर) पढ़ कर सुना दे, एक हदीस का तर्जुमा सुना दे, जिसके ज़रिये दीन की बात उनके कान में पड़ती रहे। यह काम तो हर शख़्स कर सकता है, अगर हर शख़्स इस काम की पाबन्दी कर ले तो इन्शा-अल्लाह इस हदीस पर अमल करने की सआदत हासिल हो जायेगी। अल्लाह तआला मुझे भी और आप सब को भी इस पर अमल करने की तौफ़ीक़ अता फ़रमाये, आमीन।

وآخر دعوانا ان الحمد لله رب العالمين